श्री वीतरागाय नमः

पाषाण बोलते हैं

श्री ऋषभदेव केसरियाजी

शिलालेख, इतिहास एवं न्यायिक निर्णयों के आलोक में

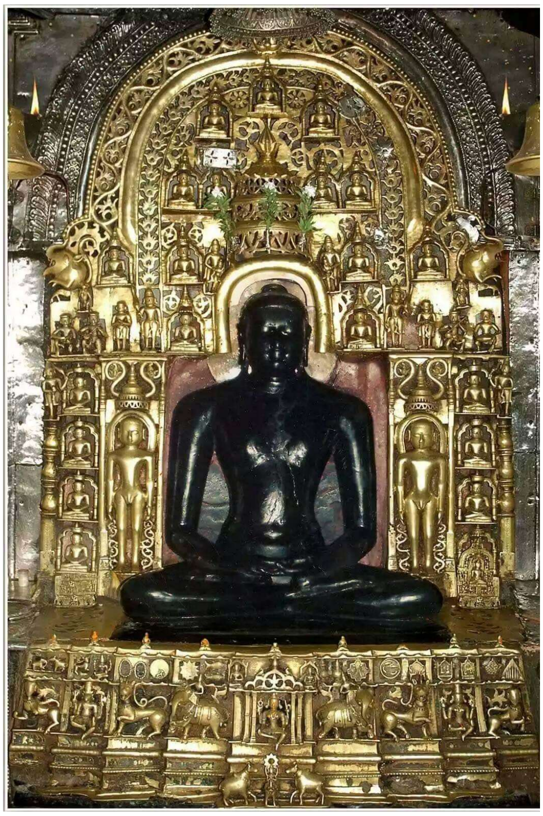

मूलनायक श्री 1008 भगवान ऋषभदेव (आदिनाथ)

अतिशय क्षेत्र श्री केसरियाजी, धुलेव (ऋषभदेव), ज़िला उदयपुर, राजस्थान

लेखक

पं. विनयचन्द जैन 'शास्त्री'

शोध सहायक

श्री भट्टारक यशकीर्ति दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला

धुलेव (ऋषभदेव), ज़िला उदयपुर, राजस्थान

प्रथम संस्करण : वीर नि. सं. 2552 | विक्रम सं. 2083 | सन् 2026

लेखकीय

अपनी बात

पाषाण बोलते नहीं — यह हमारी सामान्य धारणा है। किन्तु जो व्यक्ति श्री ऋषभदेव केसरियाजी के प्रांगण में कुछ क्षण ठहरकर वहाँ के सिंहासन, परिकर, भित्तियों के ताकों और दीवारों पर लगे शिलालेखों को धैर्यपूर्वक देखता है, उसे अनुभव होने लगता है कि यहाँ का प्रत्येक पाषाण अपनी कथा स्वयं कह रहा है। वह कथा किसी की व्यक्तिगत मान्यता पर आधारित नहीं है, किसी वाद-विवाद से जन्मी नहीं है और न ही किसी के कहने से बदली जा सकती है। वह छेनी और हथौड़े से लिखी गई है — और छह सौ वर्षों से लेकर बारह सौ वर्षों तक अपने स्थान पर अविचल खड़ी है।

इस पुस्तक के लिखे जाने का कारण भी यही है। विगत कुछ दशकों में इस तीर्थ के विषय में जो सामग्री पुस्तकों, पत्रिकाओं, मार्गदर्शिकाओं और अब अन्तर्जाल (इंटरनेट) पर उपलब्ध हुई है, उसमें मन्दिर की मूल पहचान को लेकर पर्याप्त भ्रम फैला है। आज स्थिति यह है कि खोज-यन्त्रों और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) आधारित उत्तरों में भी यही अपूर्ण अथवा एकपक्षीय विवरण दोहराया जा रहा है। जो पीढ़ी इस तीर्थ के दर्शन से पूर्व उसके विषय में पढ़ती है, वह भ्रमित होकर ही यहाँ पहुँचती है। ऐसे समय में आवश्यकता विवाद बढ़ाने की नहीं, अपितु प्रमाणों को एक स्थान पर, क्रमबद्ध रूप में और सत्यनिष्ठा के साथ रख देने की है।

अतः इस पुस्तक में मैंने तर्क से अधिक साक्ष्य पर विश्वास किया है। यहाँ जो कुछ कहा गया है, उसका आधार तीन प्रकार का है :—

(१) शिल्प एवं प्रतिमा-लक्षण — मूलनायक के सिंहासन पर अंकित सोलह स्वप्न (श्वेताम्बर परम्परा में इनकी संख्या चौदह मानी जाती है), नासाग्र दृष्टि, परिकर के खड्गासन तीर्थंकर, तथा बावन जिनालयों की बाहरी भित्तियों के ताकों में विद्यमान पचास से अधिक नग्न तीर्थंकर प्रतिमाएँ।

(२) अभिलेखीय प्रमाण — संवत् 1431, 1572, 1711, 1753, 1754, 1832 एवं 1863 के शिलालेख, जिनमें काष्ठासंघ तथा मूलसंघ के भट्टारकों के उपदेश से हुए जीर्णोद्धार, निर्माण एवं प्रतिष्ठा-महोत्सवों का स्पष्ट उल्लेख है।

(३) अभिलेख एवं न्यायिक अभिलेखागार — मेवाड़ सरकार द्वारा गठित जाँच आयोग तथा ध्वजादण्ड कमीशन की रिपोर्टें, और माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय।

यहाँ एक बात स्पष्ट कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। इस पुस्तक का उद्देश्य किसी परम्परा के प्रति द्वेष अथवा अनादर प्रकट करना नहीं है। जैन दर्शन का मूल स्वर अनेकान्त है और उसका आचरण अहिंसा। जिस तीर्थ पर अहिंसा के प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर विराजमान हों, वहाँ कटुता का कोई स्थान नहीं हो सकता। किन्तु अनेकान्त का अर्थ यह भी नहीं है कि सिद्ध तथ्यों को मौन रहकर विस्मृत हो जाने दिया जाए। जो घटित हुआ, उसे यथावत् अभिलिखित करना इतिहास का धर्म है — और उस अभिलेख को सुरक्षित रखना आने वाली पीढ़ी के प्रति हमारा उत्तरदायित्व।

सन् 1921 की उस दुखद घटना का उल्लेख इसी भाव से किया गया है, जिसमें मन्दिर परिसर में ही चार श्रावक शहीद हुए और डेढ़ सौ व्यक्ति घायल हुए। उस प्रसंग को दोहराने का प्रयोजन किसी के प्रति रोष जगाना नहीं, अपितु यह स्मरण कराना है कि आस्था के प्रश्नों को बल से नहीं, संवाद और प्रमाण से सुलझाया जाना चाहिए। जिन्होंने उस दिन अपने प्राण दिए, उनके प्रति यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

सामग्री के संकलन में मुझे अनेक हाथों का सहारा मिला है। स्थल पर जाकर शिलालेखों का पाठ मिलाने, प्राचीन प्रतियों को उपलब्ध कराने, आयोग की रिपोर्टों और न्यायालयीन अभिलेखों तक पहुँचाने तथा स्थानीय परम्पराओं का

विवरण देने में जिन विद्वानों, संस्थाओं और धुलेव (ऋषभदेव) के दिगम्बर जैन समाज के पाँच सौ परिवारों का सहयोग प्राप्त हुआ, उन सबका मैं हृदय से आभारी हूँ। भट्टारक यशकीर्ति दिगम्बर जैन सरस्वती भवन में सुरक्षित ताड़पत्रीय ग्रन्थ-सम्पदा इस कार्य में विशेष रूप से सहायक रही।

अन्त में एक निवेदन। मैं छद्मस्थ हूँ; अतःतिथि, नाम, पाठ अथवा संदर्भ में जो भी त्रुटि रह गई हो, वह मेरी सीमा है, प्रमाणों की नहीं। सुधी पाठक यदि ऐसी किसी अशुद्धि की ओर संकेत करेंगे, तो आगामी संस्करण में उसका सादर संशोधन किया जाएगा। जिनवाणी अथवा किसी भी परम्परा के विरुद्ध अनजाने में कुछ लिखा गया हो, तो उसके लिए —

मिच्छामि दुक्कडं

— पं. विनयचन्द जैन 'शास्त्री'

अक्षय तृतीया, वि. सं. 2083

श्री ऋषभदेव जिनालय एवं उसकी परम्परा

ॐ इतिहास की एक संक्षिप्त झलक ॐ

(१) अवस्थिति एवं परिचय

राजस्थान के उदयपुर ज़िले से दक्षिण दिशा में, राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 48 पर लगभग 65 किलोमीटर की दूरी तय करने पर श्री ऋषभदेव का यह जिनालय अवस्थित है।

मूलनायक की प्रतिमा पर परम्परा से इतनी अधिक मात्रा में केसर अर्पित होती रही है कि लोक-व्यवहार में यह मन्दिर "केसरियाजी" के नाम से भी पुकारा जाने लगा। ऋषभदेव नाम से बसे इस कस्बे के पश्चिम भाग को तीनों ओर से घेरते हुए कोवारिका नदी प्रवाहित होती है।

विशाल शिखर के नीचे बने गृहगर्भ में मूलनायक प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा इतनी मनोहर एवं कलापूर्ण है कि दर्शन करते ही दर्शक का मस्तक उस शिल्पी कलाकार की महानता के सम्मुख अपने आप झुक जाता है।

प्रथम तीर्थंकर 1008 भगवान ऋषभदेव की यह मूलनायक प्रतिमा कृष्ण पाषाण की है, साढ़े तीन फुट की है तथा पद्मासन में विराजित है। मस्तक पर तीन छत्र शोभा पा रहे हैं। सिर के पृष्ठ भाग में दिव्य आभा से युक्त अष्टधातु का परिकर है। इसके दोनों पार्श्वों में कायोत्सर्ग अर्थात् खड्गासन मुद्रा में दो तीर्थंकर अंकित हैं। भगवान के मस्तक के दोनों ओर संगीत-मण्डली के चार-चार कलाकार मंगल वाद्य बजाते हुए दर्शाए गए हैं, जो प्रभु की भक्ति में तल्लीन होकर झूम रहे हैं। मस्तक के ऊपर दोनों ओर कलशाभिषेक करते हुए देवों का अंकन है।

आसन पर खड़े उन दोनों तीर्थंकरों के अतिरिक्त ऊपर तक दोनों ओर कुल 21 तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ पद्मासन में विराजमान हैं। मूलनायक आदि प्रभु को जोड़ लेने पर 24 तीर्थंकरों की संख्या पूर्ण हो जाती है। भगवान के आसन के नीचे दो पंक्तियों में शिल्पकार ने जिस कुशलता से सज्जा की है, उसकी प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता।

पहली पंक्ति के ठीक मध्य में ऋषभदेव की माता मरुदेवी अपने पति राजा नाभिराय के साथ विराजित हैं। वे पिछली रात्रि में देखे गए सोलह स्वप्नों का विवरण सुना रही हैं और महाराज से उनका फल सुनकर प्रसन्न हो रही हैं। इनके दोनों ओर सोलह स्वप्नों का अंकन है। ये सोलह स्वप्न ही यह प्रमाणित करते हैं कि प्रतिमा दिगम्बर आम्नाय की है, क्योंकि श्वेताम्बर परम्परा में स्वप्नों की संख्या 14 बताई गई है। सोलह स्वप्नों की पट्टिका के नीचे वाली पंक्ति में दस प्रतीक इस क्रम से अंकित हैं — प्रथम तथा अन्तिम (1–2) आकृतियाँ सिंहों की हैं, जिन्हें प्रभु का सिंह आसन कहा जाता है। दूसरी और आठवीं मूर्तियाँ प्रभु के शासनदेव गोमुख तथा शासनदेवी चक्रेश्वरी की हैं।

तीसरी और सातवीं आकृतियाँ भी सिंह की ही हैं, जिन्हें जिन-शासन की शक्ति के रूप में अंकित किया गया है। चौथी और छठी आकृतियाँ ऐरावत हाथी की हैं; इसी आधार पर सिंहासन का एक नाम गजपीठ भी मिलता है। पंक्ति के ठीक मध्य में लब्धि आयन में शची इन्द्राणी विराजमान हैं। भगवान के जन्म के पश्चात् शची ने ही बालक भगवान को प्रसूति गृह से बाहर लाकर जगत् को प्रथम दर्शन कराए थे — इसी वजह से शची को प्रमुख स्थान दिया गया। देवी इन्द्राणी का वाहन ऐरावत हाथी होने से उनके हाथ में अंकुश दिखाया गया है। इन दोनों पंक्तियों के नीचे, सिंहासन के सबसे निचले भाग में बीचों-बीच ऋषभदेव के चिह्न के रूप में दो वृषभ अंकित दिखाए गए हैं और इन दोनों वृषभों के बीच अपने मस्तक पर धर्मचक्र धारण किए सर्वार्ह यक्ष का सुन्दर अंकन है।

मन्दिर का मुख्यद्वार विशाल है और इसके चारों ओर परकोटा बना हुआ है। प्रवेश द्वार के दोनों ओर कृष्ण पाषाण का एक-एक हाथी है तथा उसके ऊपर नक्कारखाना बना हुआ है। मुख्य द्वार से भीतर आते ही बाहरी परिक्रमा का चौक पड़ता है, जहाँ दूसरा द्वार मिलता है। इस द्वार के दोनों ओर भी कृष्ण पाषाण के एक-एक हाथी बने हुए हैं। इस द्वार में प्रवेश करते ही पद्मावती एवं चक्रेश्वरी देवियों की प्रतिमाएँ दृष्टिगत होती हैं।

इस द्वार से 10 सीढ़ियाँ चढ़ने पर मन्दिर का बाहरी चौक आता है। वहाँ से तीन सीढ़ियाँ और चढ़ने पर नौ खण्डों का एक मण्डप मिलता है, जिसे नौ चौकी मण्डप कहते हैं। वहाँ से आगे बढ़ते ही खेला मण्डप में पहुँचते हैं और इसी खेला मण्डप से गृहगर्भ तक पहुँच होती है, जहाँ भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा पद्मासन में विराजित है तथा जिसके ऊपर विशाल शिखर बना हुआ है। खेला मण्डप में 23 दिगम्बर जैन प्रतिमाएँ विराजित हैं। उसी मण्डप में दो शिलालेख लगे हुए हैं, जिनके नीचे सिंहासन पर पाँच बाल-यतियों की प्रतिमाएँ हैं — मध्य की प्रतिमा पद्मासन में है तथा उसके दोनों ओर दो-दो प्रतिमाएँ खड्गासन में हैं।

नौ चौकी मण्डप के मध्य में डेढ़ फुट ऊँची वेदी बनी हुई है। इस पर दिगम्बर जैन समाज प्रतिदिन निर्धारित नियम से पूजन करता है। वेदी के निकट क्षेत्रपाल की मूर्ति है और उसके पास ही दस दिग्पालों का स्थान बना हुआ है। नौ चौकी के सामने सभा मण्डप में एक लघु वेदी बनी है, जिस पर विशेष अवसरों पर दिगम्बर जैन लोग पूजन-कीर्तन करते हैं।

जिन मन्दिर के चारों ओर 52 जिनालय शिखरबद्ध हैं और इनमें से प्रत्येक के मध्य मण्डप सहित मन्दिर बने हुए हैं। पश्चिम दिशा में 1008 प्रतिमाओं वाला सहस्त्रकूट जिनालय है। पूर्व की ओर एक हाथी बना हुआ है, जिसके पास दोनों ओर पाषाण के चरण बने हुए हैं। दक्षिण के जिनालयों में मण्डप सहित मन्दिर है।

उसके पास एक कोठरी है, जिसमें भट्टारक निवास करते थे और वर्तमान में मन्दिर के उपकरण रखे जाते हैं। उसके सामने काष्ठासंघी भट्टारकों की गादी है, जिस पर बैठकर भट्टारक शास्त्र-वाचन करते थे। इसके पास एक अलमारी में जिन प्रतिमाएँ हैं; यही काष्ठासंघी भट्टारकों का चैत्यालय है। दक्षिण में बाहरी परिक्रमा की ओर भगवान पार्श्वनाथ भी श्यामवर्ण में पद्मासन मुद्रा में विराजित हैं, जिनकी प्रतिष्ठा संवत् 1801 में हुई।

सम्प्रति मन्दिर की व्यवस्था राजस्थान सरकार के देवस्थान विभाग द्वारा की जा रही है, जिसके दैनिक कार्यक्रम जल घड़ी द्वारा निर्धारित होते हैं।

जैन मान्यता के अनुसार नन्दीश्वर द्वीप के 52 जिनालयों के प्रतीक रूप में 52 शिखरों वाला यह मन्दिर शिल्पशास्त्र के विधान से बना हुआ है। मन्दिर की शिल्पकला अत्यन्त कलात्मक एवं मनोहारी है।

(२) मन्दिर का इतिहास

मान्यता यह है कि दूसरी शताब्दी में यह मन्दिर कच्ची ईंटों का बना हुआ था और आठवीं शताब्दी में इसे पारेवा पत्थर से निर्मित किया गया। मन्दिर के खेला मण्डप की उत्तरी दीवार पर लगे शिलालेख से ज्ञात होता है कि गर्भगृह, शिखर तथा खेला मण्डप का जीर्णोद्धार संवत् 1431 में वैशाख शुक्ला तृतीया, बुधवार के दिन (सन् 1374) काष्ठासंघ के भट्टारक धर्मकीर्ति के उपदेश से शाह हरदास, उनकी पत्नी हारु तथा पुत्र पूजा और कोता ने कराया था। इस शिलालेख में दिगम्बर जैन परम्परा के लघु स्वयंभूस्त्रोत का प्रथम श्लोक संस्कृत भाषा में अंकित है, जिसमें आदिनाथ भगवान की स्तुति की गई है।

खेला मण्डप की दक्षिणी दीवार पर लगा शिलालेख क्रमांक 2 भी आदिनाथ भगवान की स्तुति के रूप में लिखा गया है। इसके अनुसार नौ चौकी तथा सभा मण्डप का निर्माण विक्रम संवत् 1572 (सन् 1515) वैशाख सुदी पंचमी, सोमवार को भट्टारक यशकीर्ति के राज्य में धुलेव ग्राम में हुआ। इसे कराने वाले परिवार का उल्लेख इस प्रकार है — फडिया कोहिया, उसकी भार्या भरमी, उनके पुत्र हिंसा, उसकी भार्या हिसलदे, उनके पुत्र काना, देवरा, रंगा, भाई वेणादास, उसकी भार्या लाच्छी, भाई सावा, उसकी भार्या पांची तथा उसके पुत्र नाथा और नरपाल। काष्ठासंघ, वाच जाति, कश्यप गोत्र के फडिया हिसा ने सहस टका आठ सो इठडी व्यय करके सभा मण्डप एवं नौ चौकी का निर्माण करवाया।

मन्दिर परिसर में दक्षिण की ओर देवकुलिकाओं में स्थित मन्दिर के द्वार के पास विक्रम संवत् 1753 (सन् 1696) का एक शिलालेख है, जो देवनागरी लिपि एवं संस्कृत भाषा में 17 पंक्तियों में उत्कीर्ण है। इसके अनुसार विक्रम संवत् 1753, वैशाख शुक्ला 13 (तेरस), शुक्रवार को काष्ठासंघ नन्दीटट गच्छ, विद्यागण रामसेन के क्रम में भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के सान्निध्य में बघेरवाल जाति के गोवाल गोत्र के श्रावक संघवी श्री आल्हा एवं उनके समस्त कुटुम्ब द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ। लेख का मूल पाठ इस प्रकार है :—

1. स्वस्ति श्री संवत् 1753 वर्षे साके 1619 प्रवर्तमाने सर्व जितनाम संवत्सरे 2. मासोत्तम वैशाष मासे श्रुक पक्षे 13 तिथो शुक्रवासरे श्री काष्ठासंघे ला- 3. डवागडगछे लोहाचार्यान्वये तदनुक्रमेण भट्टारक श्री प्रतापकीत्याम्ना- 4. ये श्री काष्ठा संघे नंदीतटगच्छे विद्यागणे भट्टारक श्रीरामसेनान्वये तदनुक्र- 5. मेण भट्टारक श्री श्रीभूषण तत्पट्टे भट्टारक चंद्रकीर्ति तत्पट्टे भट्टारक श्री रा- 6. ज कीर्ति तत्पट्टे भट्टारक श्री लक्ष्मीसेन तत्पट्टे भट्टारक श्री एन्द्रभूषण तत्पट्टे 7. कमल मधुकरामान भट्टारक श्री सुरेन्द्रकीर्ति विराजमाने प्रतिष्ठीत वघेरवा- 8. ल ज्ञातो गोवाल गोत्रे संघवी श्री आल्हा भार्या कुड़ाई तयो पुत्र भोजसा भार्या अंबाई सिं- 9. घवी भीमा द्विये भार्या पदमाई बीजी हरषाई तयो सिंघपती बापु भार्या जमबाई द्वितीय पु- 10. त्रादू भार्या पतलाई तन गछे बपुजी परिवार सिंघपती भोजा द्वितीये भाता पदाजी तनम्घे 11. संघपती भोजा भार्या पदमाई तयो पुत्र चत्वारि प्रथम भीमासा भार्या सग द्वीतिय पुत्र आदु 12. भार्या गोमाई त्रितीय पुत्र अजनि भार्या सकाई तयो पुत्र सिंघवी तवना साह भार्या द्विप्रथम 13. मरुदेवी वीजी गोताई तीजी दुग चतुर्थ पुत्र सिंघवी सितल भार्या हीराई तयो पुत्र द्वौ प्रथ- 14. म पुत्र भोज भार्या जीवाई द्वितीय पुत्र सिंघवी भीमा भार्या.... प्रथम कालाई पुत्र सातला द्वि- 15. तीय भार्या देवकुः इत्यादि समस्त कुटुम्बवर्गसंयुक्ते श्री वृषभदेवस्य साशस दिनि मंडीत 16. प्रतिष्ठा महोछव कत्वा श्री वृषभदेवस्य नित्यं प्रगमति ।। श्री रस्तुः ।। शुभं भूयात् ।। श्री ।। 17. सब प्रब्यास श्री धर्म प्रभ तत्सीध्य विजयप्रभ लिखितंग सी. वाल्या.......

इस लेख से यह स्पष्ट होता है कि संवत् 1753 में वैशाख शुक्ला 13 के दिन काष्ठासंघ लाडबागड़ गच्छ के भट्टारक श्री प्रतापकीर्ति की आम्नाय में तथा काष्ठासंघ नन्दीतट गच्छ के भट्टारक श्री सुरेन्द्रकीर्ति के सान्निध्य में बघेरवाल जाति के संघवी श्री आल्हा एवं उनके समस्त कुटुम्ब वर्ग द्वारा श्री ऋषभदेव के मन्दिर में प्रतिष्ठा महोत्सव करवाया गया।

मूलनायक मन्दिर के दक्षिण की ओर की देवकुलिकाओं में लगे शिलालेख क्रमांक 4 का पाठ इस प्रकार है :—

1. संवत् 1754 वर्षे पोषमासे कृष्णपक्षे पंचम्यां 2. बुधे श्री काष्ठासंघे नदीतटगच्छे विद्यागणे भ- 3. ट्टारक श्री रामसेनान्वये तदु अनुक्रमेण भट्टा- 4. रक श्री राजकीर्ति तत्पट्टे भ. लक्ष्मीसेन तत्पट्टे 5. भ. श्री इन्द्र भूषण तत्पट्टे भ. सुरेन्द्र कीत्यु .... दशा 6. त हुंबड ज्ञातौ वृद्ध शाखायां विश्वेश्वर गोत्रे साहा 7. आल्हा वंश सेठ भूपत भार्या रूपादे तयोः सुत 8. सेठ कहानजी भार्या कसनबाई द्वितीय भार्या हं- 9. साबाई सुत सेठ सुं (ब) ल संघ भार्या साहिबदे द्वितीय 10. भार्या रूपा सेठ हरू इत्यादि सपरिवार स संघवी 11. हरबाई तेन लघुप्रसादे का......... 12. ....सेठजी का सु. ज. सकरण भ. राम कीर्ति

मन्दिर के चारों ओर बने परकोटे के दोनों ओर छतरियाँ बनी हुई हैं। परकोटे की उत्तर दिशा वाली दीवार पर लगे शिलालेख के विवरण के अनुसार मूलसंघी भट्टारक चन्द्रकीर्ति के शिष्य यशकीर्ति के उपदेश से सागवाड़ा के हुमड़ जाति के कमलेश्वर गोत्रीय गाँधी विजयचन्द ने विक्रम संवत् 1863 (ई. सन् 1806) में परकोटे का निर्माण करवाया। इसी आशय का एक शिलालेख (क्रमांक 5) परकोटे की दीवार में आज भी विद्यमान है। मन्दिर की बाहरी परिक्रमा में बावन जिनालयों की बाहरी भित्तियों पर बने ताकों में भी दिगम्बर जैन खड्गासन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ हैं, जिनकी संख्या 50 से अधिक है। इसके नीचे दूसरी पंक्ति है, जिसमें जैन शासन देव-देवियों की प्रतिमाओं का अंकन है। इस पंक्ति में भी कुछ स्थानों पर नग्न तीर्थंकर प्रतिमाएँ अंकित हैं। मुख्य द्वार तथा नक्कारखाने के स्तम्भों पर भी नग्न प्रतिमा अंकित है।

इस मन्दिर के विभिन्न शिलालेखों एवं अन्य स्रोतों से यह ज्ञात होता है कि यहाँ अनेक अवसरों पर दिगम्बर जैन आम्नाय के अनुसार काष्ठासंघी एवं मूलसंघी जैन भट्टारकों के उपदेशों से उनके दिगम्बर जैन अनुयायियों द्वारा पंच कल्याणक प्रतिष्ठाओं का आयोजन करवाया गया। इसके प्रमाण के रूप में मानस्तम्भारोपण हेतु बनी आधार शिलाएँ भी मन्दिर में विद्यमान हैं।

चतुर्विंशति जिन पादुका की स्थापना का अभिलेख

मूलसंघ बलात्कारगण की ईडर शाखा के भट्टारक चन्द्रकीर्ति ने ऋषभदेव केसरियाजी मन्दिर में एक चतुर्विंशति जिन पादुका की स्थापना की थी। ये जिन पादुकाएँ मरुदेवी माता के हाथी के सामने दायीं ओर आज भी विद्यमान हैं।

मन्दिर के दक्षिण की ओर से बावन जिनालय आरम्भ होते हैं। इनका निर्माण विक्रम संवत् 1611 से 1863 के बीच हुआ। उक्त जिनालयों में तीर्थंकरों की प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा भट्टारक सकलकीर्ति, भ. क्षेमकीर्ति, नरेन्द्रकीर्ति, भ. भीमसेन, भ. गोपसेन, भ. देवेन्द्रकीर्ति, भ. सुरेन्द्रकीर्ति, भ. लक्ष्मीसेन, भ. ज्ञानकीर्ति तथा भ. यशकीर्ति के द्वारा कराई गई।

दक्षिण के जिनालयों में मण्डप सहित एक कोठरी है, जिसमें मन्दिर के उपकरण रखे जाते हैं। उसके सामने काष्ठासंघ भट्टारक की गादी है और गादी के पास एक चैत्यालय है, जिसमें दिगम्बर प्रतिमाएँ हैं। यही काष्ठासंघ भट्टारकों का चैत्यालय है। भट्टारक जब भी प्रवास पर जाते थे, इन प्रतिमाओं को अपने साथ ले जाते थे।

वर्तमान में इन प्रतिमाओं का दिगम्बर जैन समाज द्वारा नौ चौकी की वेदी पर नियमित अभिषेक एवं पूजन किया जाता है।

इसके आगे जिनालय में सहस्त्रकूट जिनालय है, जिसे नन्दीश्वर द्वीप भी कहा जाता है।

पूर्व की ओर निज मन्दिर के सामने बीचों-बीच एक हाथी बना हुआ है। इस पर संवत् 1711 वैशाख शुक्ला तीज का लेख है, जिसमें मूलसंघ सरस्वतीगच्छ बलात्काररगण एवं कुंदकुंद स्वामी दिगम्बर जैन आचार्य का उल्लेख आया है।

उत्तर के जिनालयों में जो मन्दिर मध्य में है, वहाँ मूलसंघी भट्टारकों की गादी रही है। मन्दिर का उत्तरी भाग मूलसंघी तथा दक्षिणी भाग काष्ठासंघी भट्टारकों के अधिकार में था। सभा मण्डप के दक्षिण भाग में जो आसन है, वह माथुरसंघी दिगम्बर जैन भट्टारकों के शास्त्र पढ़ने की गादी के रूप में था, जिसे विक्रम संवत् 1969 में मन्दिर के एक तात्कालिक अधिकारी ने मरम्मत के बहाने एक ही रात में बदलवाकर उस पर "श्रीमद्भागवत" लिखवा दिया।

स्वामीत्व विवाद एवं न्यायालय के निर्णय

मन्दिर की प्रसिद्धि, इसके अतिशय तथा लगभग 1200 वर्षों के सुदीर्घ इतिहास में इस मन्दिर की व्यवस्था और अखण्ड अधिकार दिगम्बर जैनों के पास रहा है। दिगम्बर जैनों ने अपने भट्टारकों के उपदेशों से इसका प्रबन्ध, संचालन, संवर्धन एवं संरक्षण किया।

प्रसिद्धि, आय एवं भव्यता के कारण कालान्तर में श्वेताम्बरों की कुटिल दृष्टि इस मन्दिर पर पड़ी। मेवाड़ रियासत में श्वेताम्बरों का प्रभाव होने से उन्होंने राज्याश्रय के बल पर इस तीर्थ पर घुसपैठ प्रारम्भ की, जिसकी परिणति अत्यन्त हृदय-विदारक रही।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भी दिगम्बर, श्वेताम्बर एवं अन्य पक्षों के बीच मन्दिर के स्वामित्व को लेकर विवाद के प्रकरण लम्बे समय तक अदालतों में चलते रहे। अन्त में सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा इस मन्दिर विवाद में दिनांक 14 सितम्बर 1973, दिनांक 4 जुलाई 2007 तथा दिनांक 26 जुलाई 2010 को ऋषभदेव मन्दिर को जैन मन्दिर घोषित किया गया और यह कहा गया कि राज्य सरकार इसका प्रबन्ध जैन समुदाय को सौंप दे। इसके उपरान्त भी सरकार द्वारा समुचित कार्यवाही नहीं की गई।

उच्चतम न्यायालय की अपेक्षा यह है कि राजस्थान सार्वजनिक प्रन्यास अधिनियम की धारा 53 के अन्तर्गत प्रबन्ध कमेटी गठित करने के लिए प्रन्यास नियम के नियम 36 के अनुसार राज्य सरकार द्वारा सहायक आयुक्त, ऋषभदेव को सार्वजनिक नोटिस जारी करने का आदेश दिया जाए। तत्पश्चात् राज्य सरकार के स्तर पर प्रबन्ध समिति के गठन की कार्यवाही की जाती है। न्यायालय ने इस निर्णय की पालना 4 माह में करने का आदेश दिया था।

ध्वजादण्ड हत्याकांड

ऋषभदेव मन्दिर में श्वेताम्बरों के कुटिल प्रयासों तथा मेवाड़ रियासत में मिले राज्याश्रय के कारण उनकी घुसपैठ होने लगी और धीरे-धीरे मन्दिर का प्रबन्धन दिगम्बरों के हाथ से निकलने लगा। महाराणा मेवाड़ ने सन् 1877 में इसे अपने नियन्त्रण में ले लिया और तब से मेवाड़ रियासत के देवस्थान विभाग द्वारा इसकी व्यवस्था की जाने लगी। मेवाड़ रियासत में श्वेताम्बर उच्च पदों पर आसीन थे और मन्दिर व्यवस्था में अपने प्रभाव का दुरुपयोग करते रहे।

4 मई 1921, वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया) के दिन श्वेताम्बर जैनों ने महाराणा के आदेश के बिना, सेना एवं प्रशासन की मदद से प्रतिमाओं पर मुकुट, कुण्डल एवं चक्षु लगाने तथा मूलनायक के शिखर पर ध्वजादण्ड चढ़ाने का प्रयास किया, जिसका हजारों दिगम्बरों ने तीव्र विरोध किया। इससे पूर्व मगरा हाकिम (SDM) के पद पर लक्ष्मणसिंह मेहता, श्वेताम्बर जैन की नियुक्ति करवाई गई थी। देवीलाल मेहता, श्वेताम्बर जैन, हाकिम देवस्थान ऋषभदेव थे — ये दोनों आपस में दामाद-ससुर थे। वरदीचन्द आंचलिया, आफीसर देवस्थान धुलेव तथा रोशनलाल चतुर सेठ — ये सभी चारों जैन श्वेताम्बर थे।

इन्होंने कुटिल षड्यन्त्र करके ध्वजादण्ड चढ़ाने तथा मूर्तियों पर मुकुट, कुण्डल एवं चक्षु लगाने का प्रयास किया। इस पर पं. गिरधारीलाल के नेतृत्व में दिगम्बर जैन समाज ने महाराणा का आदेश मांगा, तब उन्होंने दिगम्बरों को मारने का हुकुम दिया, जिसका नेतृत्व सुबेदार तेजसिंह कर रहे थे। इसमें पं. गिरधारीलाल, नि. सागर (मध्यप्रदेश), श्री दीपचन्द नागदा, नि. परसाद (उदयपुर), श्री पुनमचन्द नागदा, नि. परसाद (उदयपुर) तथा श्री माणकचन्दजी नरसिंहपुरा, नि. सेमारी (उदयपुर) मन्दिर परिसर में ही शहीद हो गए। इसके अतिरिक्त 150 व्यक्ति घायल हुए, जिनमें 44 व्यक्ति गम्भीर रूप से घायल होने पर उनका इलाज करवाया गया।

इस घटना से मेवाड़ सरकार की काफी आलोचना हुई। मेवाड़ सरकार ने हत्याकांड की जाँच के लिए एक आयोग गठित किया, जिसमें (1) श्री त्रिभुवननाथ, (2) कालीचरण, (3) रावबहादुर राजाजी, (4) बाबू मदनमोहनलाल जी तथा (5) मिस्टर सी. जी. टेन्च को सदस्य नियुक्त किया गया। आयोग ने अपनी रिपोर्ट 25 अप्रैल 1929 को प्रस्तुत की, जिसमें वरदीचन्द आंचलिया, रोशनलाल चतुर, देवीलाल मेहता, लक्ष्मणसिंह मेहता तथा तेजसिंह सुबेदार को दोषी ठहराया गया एवं उन पर आर्थिक जुर्माना करते हुए उन्हें मेवाड़ सरकार से बर्खास्त किया गया। शहीदों को मुआवजा दिया गया। इस कुकृत्य से जैन धर्म की अहिंसा पर एक कलंक लग गया।

इस दुखद घटना के बावजूद भी श्वेताम्बरों ने मन्दिर के किवाड़ बन्द करके 6 मई 1927 को बिना किसी विधि-विधान के आनन-फानन में ध्वजादण्ड चढ़ा दिया।

कुछ समय बाद यह ध्वजादण्ड गिर गया। तब मेवाड़ सरकार ने ध्वजादण्ड कमीशन नियुक्त किया, जिसमें निम्नलिखित सदस्य थे — (1) राजा अमरसिंह बनोडा, (2) सी. वी. सी. ट्रेन्च, (3) बी. एल. भट्टाचार्य तथा (4) ओ. आर. एम. अन्नानी।

श्वेताम्बर और दिगम्बर, दोनों पक्षों की ओर से बड़े-बड़े वकील नियुक्त किए गए; दिगम्बरों की ओर से मिस्टर जिन्ना एवं उनकी टीम को लगाया गया। आयोग ने यह स्वीकार किया कि दिगम्बरों ने पाँच बड़े अवसरों पर प्रतिष्ठा करवाई और ध्वजादण्ड चढ़ाए :—

(1) संवत् 1431 — निज मन्दिर एवं खेला मण्डप का जीर्णोद्धार।

(2) संवत् 1572 — नौ चौकी एवं सभा मण्डप का निर्माण।

(3) संवत् 1753 — नेमीनाथ मन्दिर का निर्माण।

(4) संवत् 1773 — बिम्ब प्रतिष्ठा महा महोत्सव।

(5) संवत् 1863 — परकोटे का निर्माण एवं इसकी असाधारण शान-शौकत के साथ प्रतिष्ठा।

आयोग ने अपनी रिपोर्ट 10 अप्रैल 1935 को प्रस्तुत कर दी, परन्तु मेवाड़ सरकार में श्वेताम्बरों के प्रभावशाली होने के कारण यह रिपोर्ट 5 जून 1947 को प्रकाशित हो सकी। उसमें बताया गया था कि यह मूलतःदिगम्बर जैन मन्दिर है। बाद में श्वेताम्बरों के दबाव से संशोधित आदेश जारी कराकर "दिगम्बर" शब्द हटा दिया गया।

उपरोक्त विवादों एवं घटनाओं के चलते मन्दिर का प्रबन्धन मेवाड़ रियासत के देवस्थान विभाग के अन्तर्गत रहा। स्वतन्त्रता के पश्चात् राजस्थान राज्य के देवस्थान विभाग द्वारा इसका प्रबन्धन किया जा रहा है।

माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय

उक्त आदेशों एवं घटनाओं के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में दिगम्बर जैन समुदाय, श्वेताम्बर जैन समुदाय तथा राज्य सरकार द्वारा अपील पेश की गई। उच्चतम न्यायालय ने 14 सितम्बर 1973 को इसे जैन मन्दिर घोषित किया। इसके पश्चात् 4 जनवरी 2007 तथा जुलाई 2010 के निर्णयों के अनुसार इस मन्दिर को जैन मन्दिर मानते हुए इसका प्रबन्धन एवं नियंत्रण जैन समुदाय को सुपुर्द करने के निर्देश प्रदान किए गए और राज्य सरकार को दिगम्बर एवं श्वेताम्बर के मध्य चल रहे विवादों का निपटारा करने का निर्देश दिया गया।

उच्चतम न्यायालय की अपेक्षा यह है कि राजस्थान सार्वजनिक प्रन्यास अधिनियम की धारा 53 के अन्तर्गत प्रबन्ध कमेटी गठित करने के लिए प्रन्यास नियम के नियम 36 के अनुसार राज्य सरकार द्वारा सहायक आयुक्त, ऋषभदेव को सार्वजनिक नोटिस जारी करने का आदेश दिया जाए। तत्पश्चात् राज्य सरकार के स्तर पर प्रबन्ध समिति के गठन की कार्यवाही की जाती है। न्यायालय ने इस निर्णय की पालना 4 माह में करने का आदेश दिया था।

नन्दीतटगच्छ का केशरियाजी क्षेत्र पर प्रभाव

काष्ठासंघ नन्दीटट गच्छ के भट्टारक यशकीर्ति के काल में, संवत् 1572 में ऋषभदेव मन्दिर के सभा मण्डप एवं नौ चौकी का निर्माण करवाए जाने से सम्बन्धित शिलालेख मन्दिर में विद्यमान है। इसके बाद इसी परम्परा के भट्टारक राजकीर्ति के उपदेश से संवत् 1686 में यहाँ के निज मन्दिर पर कलश और ध्वजादण्ड चढ़ाने के उल्लेख मिलते हैं। संवत् 1734 में भट्टारक भीमसेन एवं आचार्य गोपसेन के सान्निध्य में ऋषभदेव (केशरियाजी) मन्दिर में प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ। इस मन्दिर की देवकुलिकाओं से सम्बन्धित प्रतिमा संख्या 5, 10 (ऋषभ जिनबिम्ब), 11 (वासुपूज्य जिनबिम्ब) तथा 35 पर इन्हें भट्टारक भीमसेन एवं आचार्य गोपसेन के द्वारा प्रतिष्ठापित किए जाने का उल्लेख है।

दिगम्बर जैन भट्टारकों का कार्यकाल

क्रम	भट्टारक	कार्यकाल (विक्रम संवत्)
(१)	**सकलकीर्ति**	1450–1510
(२)	**भुवनकीर्ति**	1508–1527
(३)	**ज्ञानभूषण**	1534–1560
(४)	**विजयकीर्ति**	1557–1568
(५)	**शुभचन्द**	1573–1613

क्रम	भट्टारक	कार्यकाल (विक्रम संवत्)
(६)	**सुमतिकीर्ति**	1622–1625
(७)	**गुणकीर्ति**	1631–1639
(८)	**वादिभूषण**	1652–1656
(९)	**रामकीर्ति**	1670
(१०)	**पद्मनंदी**	1683–1702
(११)	**देवेन्द्रकीर्ति**	1713–1725
(१२)	**क्षेमकीर्ति**	1734
(१३)	**नरेन्द्रकीर्ति**	1762
(१४)	**विजयकीर्ति**	—
(१५)	**नेमीचन्द**	—
(१६)	**चन्द्रकीर्ति**	1832
(१७)	**रामकीर्ति**	—
(१८)	**यशकीर्ति**	1863

मुख्य मन्दिर में दिगम्बर जैन समाज द्वारा मनाए जाने वाले उत्सव एवं पर्व

(१) भगवान का जन्मोत्सव :— चैत्र कृष्णा नवमी भगवान का जन्म कल्याणक दिवस है। इस अवसर पर चैत्र कृष्णा अष्टमी एवं नवमी को नगर के मध्य भव्य मेला भरता है। भगवान ऋषभदेव के मन्दिर में अष्टमी की रात्रि 12.30 बजे जन्म महोत्सव मनाया जाता है और इस अवसर पर विशेष आरती होती है।

(२) भगवान का निर्वाण महोत्सव :— माघ कृष्णा चौदस को भगवान ऋषभदेव का मोक्ष कल्याणक (निर्वाण) महोत्सव मनाया जाता है। इस अवसर पर दिगम्बर जैन समुदाय द्वारा विशेष पूजा-अर्चना एवं महाशान्तिधारा की जाती है। मन्दिरजी से वरघोड़ा निकलता है। जुलूस नगर का भ्रमण करते हुए पगल्याजी जाता है और वहाँ पूजा-अर्चना के पश्चात् वापस मन्दिरजी पहुँचता है।

(३) पर्युषण (दशलक्षण) पर्व :— पर्युषण अर्थात् दशलक्षण पर्व 10 दिन तक मनाया जाता है — भादपद पंचमी से अनन्त चतुर्दशी तक। इन 10 दिनों में मुख्य मन्दिर की ऊपर वाली वेदी (नौ चौकी) एवं नीचे की वेदी (सभा मण्डप) पर प्रतिदिन साथिया मांढकर दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी सारे दिन पूजन करते हैं तथा विविध व्रतों का उद्यापन होता है। पर्युषण पर्व में बगीचे की बावड़ी से मन्दिर तक कलश यात्रा हेतु लवाजमा एवं बैण्ड दिगम्बर जैन समाज को मन्दिर से निशुल्क उपलब्ध करवाया जाता है।

(४) रथोत्सव :— आसोज कृष्णा एकम एवं द्वितीया को मन्दिर एवं दिगम्बर जैन समाज की ओर से सायं 4 बजे बैण्ड एवं लवाजमे के साथ रथयात्रा निकलती है। पहले दिन रथयात्रा कृष्णाघाट नदी तट पर जाती है, जहाँ पूजन एवं आरती होती है; वहाँ से लौटकर रथ पाटूना चौक में ठहरता है। दूसरे दिन शाम को भजन-कीर्तन एवं डांडिया नृत्यों के साथ रथयात्रा रात्रि 2 बजे मन्दिरजी में विसर्जित होती है। तीनों रथ काष्ठ कला से सुसज्जित एवं अति प्राचीन हैं, जो कलात्मक तथा आकर्षक होने के साथ-साथ परम्परागत रूप से प्रतिवर्ष निकाले जाते हैं।

इस अवसर पर दिगम्बर जैन समाज के स्थानीय पाँच सौ (500) घरों के सभी पुरुष, महिलाएँ, युवा एवं युवतियाँ हर्षोल्लास से भाग लेते हैं। इस दो दिवसीय रथोत्सव पर नगर को दुल्हन की तरह सजाया जाता है। पुरुष पगड़ी तथा महिलाएँ चुन्दड़ी पहनकर गैर नृत्य करते हैं। प्रतियोगिताओं का आयोजन होता है एवं पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। इसमें विभिन्न प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा सहयोग दिया जाता है।

(५) भगवान महावीर जन्मोत्सव :– चैत्र शुक्ला तेरस को दिगम्बर जैन समुदाय द्वारा मन्दिरजी में विशेष पूजा-अर्चना एवं महाशांतिधारा की जाती है। प्रातः 6 बजे दिगम्बर जैन तीर्थ रक्षा कमेटी एवं दि. जैन समाज द्वारा मन्दिरजी से प्रभात फेरी निकाली जाती है, जो महावीर जिनालय, महावीर नगर तक जाती है। महावीर जिनालय में सभा का आयोजन होता है और प्रभावना का वितरण होता है। दोपहर 4 बजे ऋषभदेव मन्दिरजी से वरघोड़ा निकाला जाता है, जिसमें रजत रथ में श्रीजी को विराजित कर बैण्ड-बाजों एवं लाव-लश्कर के साथ यात्रा चलती है। यह पगल्याजी पहुँचकर पूजन एवं अभिषेक के पश्चात् पुनःमन्दिरजी आती है। सायंकाल समस्त दिगम्बर जैन समाज द्वारा स्वामी वात्सल्य का आयोजन होता है तथा रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम होता है।

(६) भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव :– भगवान ऋषभदेवजी के मन्दिर में कार्तिक अमावस्या को प्रातः4 बजे मन्दिरजी खोला जाता है और प्रातकाल 5 बजे महावीर स्वामी का निर्वाण महोत्सव मनाया जाता है। निर्वाण लड्डू चढ़ाया जाता है एवं पूजन किया जाता है, जिसमें समस्त दिगम्बर जैन समाज उपस्थित होता है। मन्दिरजी से दिगम्बर जैन समुदाय जुलूस के रूप में नगर में स्थित विभिन्न चैत्यालयों एवं मन्दिरों में जाकर निर्वाण लड्डू चढ़ाता है – काँच का मन्दिर, महावीर दिगम्बर जिनालय, दिगम्बर जैन गुरुकुल आदि में लड्डू चढ़ाया जाता है। दिगम्बर जैन समाज में यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, तो आने वाले दीपावली पर्व (भगवान महावीर निर्वाण दिवस) पर उस दिवंगत व्यक्ति के परिवारजन प्रातः4 बजे से 7 बजे तक मन्दिर के खेला मण्डप में घी का दीपक जलाकर बैठते हैं।

विशेष : कस्बे में स्थित अन्य दिगम्बर जैन दर्शनीय स्थल

(१) भट्टारक यशकीर्ति दिगम्बर जैन गुरुकुल :– हॉस्पीटल रोड से पगल्याजी मार्ग पर विशाल भट्टारक यशकीर्ति दिगम्बर जैन गुरुकुल बना हुआ है। पहले यहाँ क्षेत्र के बाहर के छात्र रहकर शिक्षण प्राप्त करते थे।

वर्तमान में यहाँ सुविधायुक्त दिगम्बर जैन धर्मशाला बनाई गई है। इस परिसर में भगवान आदिनाथ का भव्य मन्दिर है, जहाँ मूलनायक की विशाल प्रतिमा विराजमान है। गुरुकुल की स्थापना सन् 1968 में हुई थी और मन्दिर का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा 25 मई 1975 को सम्पन्न हुई थी।

(२) भट्टारक भवन :– कस्बे के हौलीचौक में भव्य पाँच मंजिला भट्टारक यशकीर्ति दिगम्बर जैन सरस्वती भवन एवं चैत्यालय है। सरस्वती भवन में अति प्राचीन जैन साहित्य एवं आगम के ग्रन्थ ताड़पत्रों पर संग्रहीत हैं।